International Journal of Multidisciplinary Research and Development
Online ISSN: 2349-4182 Print ISSN: 2349-5979
Impact Factor RJIF: 5.74
www.allsubjectjournal.com
Volume 3; Issue 1; January 2016; Page No. 188-190

अर्थ की परिभाषा और स्वरूप

डॉ. शिवदत्त शर्मा

पूर्व अध्यक्ष हिन्दी विभाग, राजकीय महाविद्यालय ढलियारा कांगडा हि.प्र.

अर्थ की अवधारणा और स्वरूप

भाषा में शब्द और अर्थ का महत्व सर्व विदित है। दोनों का संबन्ध चोली दामन का है। इसी लिए भाषा विज्ञान में अर्थ विज्ञान एक महत्वपूर्ण इकाई है। सभी भाषा वैज्ञानिक यह एकमत से स्वीकार करते हैं कि शब्द की आत्मा अर्थ ही है, क्यों कि अर्थ के बिना शब्द का क्या महत्व रहेगा ? अर्थ विज्ञान से पूर्व अर्थ के स्वरूप को जानना आवश्यक है। अर्थ के स्वरूप को जाने बिना भाषा और उसके प्रभाव को समझना सरल नहीं है। भाषा वस्तुतः भावों और विचारों के परस्पर आदान प्रदान का माध्यम है। यह भी कह सकते हैं कि भाषा भावों और विचारों को एक दूसरे तक पहुंचाने का वाहन है।साधन होने के साथ साथ उसका मूल तत्व भी है। शब्द तो मात्र स्वर और व्यंजन का समाहार ही हैं, परन्तु अर्थ ही भाषा को जीवन्त बनाता है। मनुष्य जब ध्वनियों के एक निश्चित क्रम को अपनाता है तो शब्द का निर्माण होता है। सभी शब्द सार्थक होते हैं और प्रत्येक शब्द किसी एक निश्चित अर्थ को अपने में समाए होता है।[1]

यह इससे सिद्ध होता है कि अगर वक्ता और श्रोता में ध्वनि भेद हो तो वक्ता और श्रोता परस्पर विचारों का आदान प्रदान नहीं कर सकते। भाषा शास्त्रियों ने अर्थ की अनेक परिभाषाएं दीं हैं तथा सभी में अर्थ के महत्व को प्रतिपादित किया गया है।

डॉ द्विवेदी शंकर के अनुसार–किसी वस्तु, स्थिति या भाव आदि तथा उसके लिए प्रयुक्त होने वाले शब्द के बीच की कडी ही उस शब्द का अर्थ है।

इस तरह भारतीय मत के अनुसार प्रतीति को ही अर्थ कहा गया है। परन्तु पाश्चात्य भाषा वैज्ञानिक प्रतीति को नहीं अपितु सन्दर्भ या संबन्ध को अर्थ मानतें हैं।

डॉ सिरलट के अनुसार–अर्थ उस व्यक्ति पर आधारित होता है, जो कुछ भाव ग्रहण करना चाहता है। अर्थ के बिना शब्द का अस्तित्व ही संदिग्ध है।

स्पष्ट है कि अर्थ के बिना भाषा का कोई महत्व ही नहीं रह जाता। जैसे ही शब्द का उच्चारण होता है तत्काल श्रोता को जो प्रतीति होती है उसी को ही दूसरे शब्दों में अर्थ कहा जाता है। इससे यह तो स्पष्ट है कि भाषा का बाह्य रूप शब्द है तथा आन्तरिक रूप अर्थ हैं। इससे इन्कार नहीं किया जा सकता कि भाषा का मूल तत्व अर्थ है। यही कारण है कि भाषा में प्रयुक्त होने वाले सभी शब्द सार्थक होते हैं। भाषा में प्रयुक्त होने वाले प्रत्येक शब्द का कोई न कोई निश्चित अर्थ अवश्य होता है। यह जरूरी है कि वक्ता और श्रोता दोनों को शब्द के उस अर्थ का ज्ञान अवश्य हो, अन्यथा वह शब्द उसके लिए तो कम से कम निरर्थक अवश्य हो जाएगा। उदाहरण स्वरूप कोई व्यक्ति किसी कंण्डक्टर से आगरा का टिकट मांगता है तो कण्डक्टर के मन और मस्तिष्क में आगरा का संज्ञान होगा या छवि उभरेगी और यह अर्थ प्रतीति के उपरान्त ही सम्भव होगा तभी सही टिकट दे पाएगा अन्यथा नहीं।

इस तरह यह स्पष्ट है कि वक्ता द्वारा उच्चरित तथा श्रोता द्वारा ग्रहित आशय या बोध को ही अर्थ कहा जा सकता है और इसकी प्रतीति केवल मन या मस्तिष्क पर अंकित बिम्ब के रूप में होती है। अतः शब्द यदि भाषा का स्थूल पक्ष है तो अर्थ उसका सूक्ष्म पक्ष है। दूसरे अर्थ में कहा जा सकता है कि यदि शब्द भाषा का भौतिक पक्ष है तो अर्थ उसका मानसिक पक्ष है। शब्द के बिना अर्थ तथा अर्थ के बिना शब्द अग्राह्य है।

यह भी निश्चित है कि व्यक्ति तभी उस शब्द के अर्थ को समझ पाएगा यदि उसने उस वस्तु, व्यक्ति, स्थान, आदि के बारे में सुना हो या उसे देखा हो। अन्यथा उस व्यक्ति अथवा श्रोता के मन या मस्तिष्क में शब्द को सुन कर कोई बिम्ब नहीं उभर सकेगा और अर्थ की प्रतीति नहीं होगी। उदाहरण के लिए एक बच्चा शब्द कोष, साहित्य, शब्द शक्ति छन्द या अलंकार आदि शब्दों के निहित अर्थ को ग्रहण नहीं कर पाएगा। आम तौर पर बच्चे प्रत्येक नए शब्द का अर्थ और भाव समझने के लिए तत्पर रहते हैं और अक्सर इस संबन्ध में प्रश्न पूछते रहते हैं, तथा अपनी जिज्ञासा को शान्त करने की कोशिश करते रहते हैं, जो नितान्त स्वाभाविक भी है। जब अर्थ ग्रहण कर लेते हैं तो उस का अर्थ जानने के बाद भविष्य में उस का अर्थ ग्रहण करने में सक्षम हो जाते हैं। उस वस्तु का आकार, स्वरूप, और रूप आदि का चित्र उसके मस्तिष्क में अंकित हो जाता है और जब वह उस वस्तु के लिए प्रयुक्त शब्द या नाम को दोबारा सुनता है तो स्वतः ही उसे उसका ज्ञान हो जाता है, उसका अर्थ ग्रहण कर लेता है।

इस तरह अर्थ प्रतीति होती है। अर्थ प्रतीति के भी दो प्रकार होते हैं–स्वप्रत्यक्ष और परप्रत्यक्ष। जिस वस्तु, व्यक्ति, प्राणी आदि से मनुष्य का प्रत्यक्ष सम्पर्क होता है और इसके बाद उसके मस्तिष्क में उसकी छवि अंकित हो जाती है, तब वहां स्व प्रत्यक्ष द्वारा अर्थ–प्रतीति होती है। परन्तु प्रत्येक भाषा में अनेक शब्द अमूर्त वस्तुओं, भावों आदि के सम्बन्ध में प्रयुक्त होते हैं। इनके बारे में केवल दूसरे व्यक्ति या पुस्तक द्वारा प्रदत्त ज्ञान से ही कुछ जाना जा सकता है। जैसे–स्वर्ग, नरक, दूरस्थ आंखों से ओझल वस्तुओं, धार्मिक स्थलों का ज्ञान, आदि के बारे में ज्ञान प्राप्त करना। इसे परप्रत्यक्ष ज्ञान या प्रतीति कहा जाता है।

इस तरह परप्रत्यक्ष में व्यक्ति स्वयं तो उन पदार्थों, वस्तुओं आदि को नहीं देखता, परन्तु दूसरों के अनुभवों के आधार पर अपने मन में उसकी छवि बना लेता हें जब वह उन वस्तुओं, सूक्ष्म भावों आदि से सम्बन्धित शब्दों को सुनता है, तब उसके मस्तिष्क में वही छवि उभर आती है, तथा वह उस शब्द के अर्थ को ग्रहण कर लेता है। उदाहरण स्वरूप–नरक शब्द से ही व्यक्ति जान लेता है कि बुरे कर्मों का फल कितना बुरा होता है अथवा नरक में कितना दुख या कष्ट होता है। इस तरह दो प्रकार की अर्थ प्रतीति होती है। ये सभी शब्द से होने वाला अर्थ ज्ञान अथवा अर्थ प्रतीति कहलाती है।

अर्थ की परिभाषाएं

अर्थ के महत्व को प्रतिपादित करने वाली अनेक परिभाषाएं अनेक भाषा वैज्ञानिकों ने दीं हैं।इन भाषा वैज्ञानिकों के अतिरिक्त अनेक

प्रसिद्ध आलोचक हैं, जिन्होने अपना अपना दृष्टिकोण अर्थ के विषय में प्रस्तुत किया है।

1. महर्षि पातंजलि

पतंजलि ने भाषा के बारे में अत्यन्त महत्व पूर्ण ग्रंथ महाभाष्य की रचना की है। सम्भवतः इसे भाषाविज्ञान की दृष्टि से महत्व पूर्ण रचना माना जाता है। इसमें अर्थ को परिभाषित करते हुए पतंजलि ने इस प्रकार अपनी अपनी परिभाषा दी है–

शब्दश्च शब्दाद् बहिर्भूतः अर्थः अबहिर्भूतः– अर्थात् शब्द की अंतरंग शक्ति ही अर्थ है क्योंकि शब्द से शब्द बहिर्भूत होता है और अर्थ अबहिर्भूत अर्थात् अलग होता है। उन्होने इस को और स्पष्ट करते हुए लिखा है कि– सभी शब्द अपने अपने अर्थ का बोध कराते हैं, परन्तु जिस अर्थ के लिए जो शब्द प्रयुक्त होता है, उस शब्द का केवल वही अर्थ होता है।[2]

2. भर्तृहरि

भर्तृहरि ने अपने प्रसिद्ध ग्रंथ वाक्यपदीय में अर्थ की बडी स्पष्ट परिभाषा दी है–

> यस्मिस्तूच्चरिते शब्दे यथा को अर्थः प्रतीयते।
> तमाहुरर्थः तस्यैव नान्यदर्थस्य लक्षणम्।

अर्थात् जिस शब्द के उच्चारण करने पर जिस अर्थ की प्रतीति अर्थात् बोध होता है, वही उस शब्द का अर्थ होता है।[3]

3. आचार्य जयन्त

आचार्य जयन्त की प्रसिद्ध रचना न्याय मंजरी में अर्थ की परिभाषा देते हुए कहा है–

यो अर्थः प्रतीयते यस्मात् स तस्यार्थ इति स्मृतः। अर्थात् जिस शब्द से जिसकी प्रतीति होती है,वही उसका अर्थ है।[4]

4. कुमारिल भट्ट

कुमारिल भट्ट ने अपने ग्रंथ श्लोक वार्तिक में लिखा है कि– यत्र यो अन्वेते यं शब्दं अर्थः तस्य भवेद् असौ। अर्थात् जो शब्द के साथ सम्बन्ध रहता है, वही उस शब्द का अर्थ होता है।[5]

5. डॉ भोला नाथ तिवारी

किसी भी भाषिक इकाई, वाक्य, वाक्यांश, शब्द, आदि किसी भी इन्द्रिय, कान, मुख से ग्रहण करने पर जो मानसिक प्रतीति होती है,वही अर्थ है।[6]

6. डॉ हरिश्चन्द्र वर्मा

प्रसिद्ध भाषा वैज्ञानिक डॉ हरिश्चन्द्र वर्मा के अनुसार– अर्थ एक प्रतीति है जो वक्ता के मन में बोलते समय तथा श्रोता के कान से श्रुत ध्वनि रूप शब्द भाषा का स्थूल या भौतिक पक्ष है और उसमें निहित अर्थ भाषा का सूक्ष्म मानसिक पक्ष है।

इसके अतिरिक्त कुछ पाश्चात्य विद्वानों ने भी अर्थ की परिभाषाएं दी हैं। जिनका विवरण इस प्रकार है–

डॉ. शिलर के अनुसार– किसी वस्तु का अर्थ उसी व्यक्ति पर निर्भर रहता है जिससे वह वस्तु अभिप्रेत होती है।

डॉ. रसल के अनुसार– शब्द के सम्बन्ध विशेष को ही अर्थ कहते हैं, क्योंकि किसी भी शब्द में केवल अर्थ नहीं होता, बल्कि वह अपने अर्थ से सम्बद्ध रहता है।

एल्फ्रेड सिजविक के अनुसार– अर्थ किसी परिणाम पर निर्भर होता है, और सच्चाई अर्थ पर निर्भर होती है।

इन परिभाषाओं से स्पष्ट है कि भारतीय विद्वानों ने अर्थ को प्रतीति के रूप में स्वीकार किया है जबकि पाश्चात्य विद्वानों ने उसे प्रकरण व सम्बन्ध के रूप में ग्रहण किया है। अतः अर्थ को इस प्रकार परिभाषित किया जा सकता है–

शब्द की वह आन्तरिक व अमूर्त शक्ति, जो शब्द के उच्चरित होते ही उस व्यक्ति, वस्तु, भाव आदि का बोध करा देती है, जिसके सम्बन्ध में शब्द प्रयुक्त किया गया था–उसे अर्थ कहते हैं।

शब्द और अर्थ का सम्बन्ध नित्य है अथवा अनित्य–

शब्द और अर्थ का सम्बन्ध नित्य होता है अथवा नहीं इस सम्बन्ध में भी विवेचना हुई है। संस्कृत के प्रसिद्ध कवि कालीदास ने शब्द और अर्थ को महत्व देते हुए इसकी तुलना शिव और पार्वती के साथ की है। उन्होंने अर्थ को शब्द की आत्मा घोषित किया है। अर्थ के विषय में विचार करते ही शब्द और अर्थ का सम्बन्ध नित्य है या अनित्य इस ओर ध्यान जाता है। अगर शब्द का अर्थ मानव कृत होता तो समूचे विश्व की व्यवस्था एक ही होती। हिन्दी एवं अन्य भाषा ओं में एक ही तरह के उच्चरित शब्दों के अर्थ भिन्न भिन्न होते हैं अतः यह सिद्ध होता है कि शब्द और अर्थ का सम्बन्ध नित्य नहीं होता, अपितु अनित्य होता हैं।

वास्तव में भाषा मनुष्य द्वारा व्यवहृत यादृच्छिक ध्वनि प्रतीकों की वह व्यवस्था है जिसके द्वारा समाज के लोग परस्पर अपने विचारों का आदान प्रदान करते हैं। स्पष्ट है अपनी आवश्यकता की पूर्ती के लिए आरम्भ में समाज के बुद्धिमान लेागो, द्वारा ऐसा किया गया होगा। बाद में शब्द निर्धारण एक परम्परा बन गई। आज भी असंख्य नवीन शब्दों का निर्माण हो रहा है तथा यह परम्परा निरन्तर चलती रहेगी। नई दुनिया में नए शब्दों का आना स्वाभाविक ही है।

शब्द और अर्थ के सम्बन्ध को पारिभाषिक शब्दों में व्यक्त करने के लिए उत्पत्तिवाद, अभिव्यक्तिवाद, ज्ञप्तिवाद तथा प्रतीक वाद की चर्चा की जाती है।

उत्पत्ति वाद का अभिप्राय यह है कि अर्थ और शब्द में परस्पर उत्पादक–उत्पाद्य का सम्बन्ध है। इसका भाव है कि अर्थ की स्थिति पहले होती है तथा उसकी अभिव्यक्ति के लिए बाद में शब्द की रचना की जाती है।

ज्ञप्तिवाद के अनुसार शब्द अर्थ की ज्ञप्ति कराता है। उन दोनों में ज्ञाप्य–ज्ञापक सम्बन्ध रहता है।

अभिव्यक्ति वाद का अर्थ है शब्द के द्वारा अर्थ की अभिव्यक्ति होना। शब्द व्यंजक है तथा अर्थ व्यंग्यहै। इसका प्रवर्तन महर्षि पतंजलि ने किया था। उन्होंने महाभाष्य में लिखा है–शब्द वह है जो कान से सुना जाता है, बुद्धि से ग्रहण किया जाता है। आकाश जिसका स्थान है जो प्रयोग से अभिज्वलित होता है।[7]

इसी तरह प्रतीक वाद शब्द और अर्थ के बारे में यह चौथा मत है। इसके अनुसार शब्द उस वस्तु के अर्थ का प्रतीक होता है जो हमारे मन में होती है।

अर्थ बोध का सर्वाधिक प्रचलित साधन व्यवहार है क्योंकि मानव बचपन से लेकर वृद्धावस्था तक व्यवहार द्वारा शब्दों को सीखता है। दूसरा साधन है आप्त वाक्य। जिन व्यक्तियों ने किसी वस्तु को प्रत्यक्ष देखकर या चिन्तनमनन करके जाना हैउनके द्वारा प्रयुक्त किए गए शब्द ईश्वर, स्वर्गनरक आदि आप्त वाक्य से सम्बन्धित हैं।

उपमान द्वारा भी हमें अर्थ बोध होता है। इसी प्रकार वाक्य शेष, विवृत्ति, प्रसिद्ध पद का सान्निध्य, व्याकरण, तथा कोष भी अर्थ बोध के साधन हैं। पाश्चात्य विद्वान प्रदर्शन, विवरण तथा अनुवाद को अर्थ बोध का साधन मानते हैं।

डॉ हरिचन्द्र वर्मा ने शब्द और उसके अर्थ पर अपने विचार व्यक्त करते हुए कहा है–जिस प्रकार भाषा शब्दों से बनती है उसी प्रकार विश्व पदार्थों से। बोलचाल में प्रयुक्त शब्द को ही पद कहते हैं तथा पद के अर्थ को ही पदार्थ। वह वस्तु जिसका पद से बोध हो पदार्थ कहलाता है। पद अभिधा है और पदार्थ अभिधेय। ये पदार्थ स्थूल भी हो सकते हैं सूक्ष्म भी। स्थूल पदार्थों का बोध पांच ज्ञानेन्द्रियों से

अन्तः करण को होता है, जबकि सूक्ष्म पदार्थों के बोध में इन्द्रियों का योग बहुत कम होता है और अन्तः करण की भूमिका प्रबल रहती है। मानवता और पशुता का बोध बहुत कुछ अतीन्द्रीय है, फिर भी मानवता के पीछे मानव और पशुता के पीछे कोई न कोई पशु अवश्य झांकता प्रतीत होता है, तभी तो दोनों की प्रतीति या बोध पृथक पृथक होता है। इस प्रकार शब्द व्यवहार से उभरने वाला मानसिक बोध ही उस शब्द का अर्थ हैं

इस तरह शब्द और अर्थ की क्या अवधारणा है तथा दोनों का सम्बन्ध एवं स्वरूप क्या है इस विषय पर विभिन्न विद्वानों के विचार सम्मिलित करके यह स्पष्ट करने का लघु प्रयास किया गया है।

सन्दर्भ सूचि

1 डॉ भोला नाथ तिवारी : भाषा विज्ञान पृ 158
2 महर्षि पतंजलि : महाभाष्य प्रथम अह्निक
3 भतृ हरि : वाक्यपदीय पृ 38
4 आचार्य जयन्त : न्यायमंजरी पृ 91
5 कुमारिल भट्ट : श्लोक वार्तिक पृ 123
6 डॉ भोलानाथ तिवारी : भाषा विज्ञान पृ 175
7 महर्षि पतंजलि : महाभाष्य प्रथम अह्निक